

मध्यप्रदेश के एक गांव ककैया में आंखों खुलीं • इसके पहले अंधारा ही था • रातें डरावनी होती थीं • दिन को कुछ दिखाई नहीं देता, कुछ समझ नहीं आता • सात साल की उम्र में, मैं प्रायमरी शाला का सब से बेंकार विद्यार्थी था • दिल छालवूद में ही रहता था • निगाहें रहती थीं छिड़की के बाहर नीले आसमान पर, पेड़ों पर, चिड़ियों की तरह मन भटकता रहता था •

हमारे शिक्षक श्री "पंडित जी" स्कूल के हेडमास्टर, मेरे पिता के मित्र थे • इन्हें कुछ दया आई • एक दिन पढ़ाई के ~~बस~~^{बाद} इन्होंने मुझे रोका • एक पेसिल से शाला की सफ़ेद दीवार पर इन्होंने एक "बिन्दु" बनाया और कहा : तुम यहाँ बैठो सब भूल जाओ, शाला को, छाल को, कुटुम्ब को • केवल इस बिन्दु पर ध्यान दो, इसी पर मन लगाओ • यह क्रम जारी रहा कई दिन, बाद में दूसरे विषय पढ़ाये गये • नये शिक्षक मिले • एकाग्रता बढ़ती गई, चेतवनी मिली • "बिन्दु" शून्य था, सूर्य बन गया, प्रकाशमय, दंग दिखे, नये जीवन का प्रारम्भ हुआ •

यह 'पाठ' आज 50 साल से मेरे जीवन में समझ समायारा रहा है • समय बदला, परिस्थितियाँ बदलीं, देश-विदेश जाना पड़ा, मगर वास्तव में असलियत एक ही रही • अपने को दूढ़ना, अपनी सोती हुई शक्तियों को जगाना आसान नहीं है • एकाग्रता, चिन्तन और साधना से ही आत्मविकास हो सकता है •

आरम्भिक दिनों की बहुत-सी यादें हैं • ज़िन्दगी और कला के बारे में भी कुछ कहना है • समय कम है • शब्द नहीं मिलते हैं • अतल शून्य की अनृतता कोन समझा सकता है • इसीलिये चाहता हूँ - मैं न बोलूँ, चित्र बोलें •

हेदर रज़ा